21. माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख मांहि।
मनवा तो चहुं दिश फिरै, यह तो सुमिरन नांहि॥

शब्दार्थ—माला तो हाथ में फिरती रहती है और जीभ मुंह में फिरती रहती है (यानि उंगलियां माला के मनके चलाने में और मुंह मन्त्र को रटने में लगा रहता है, किन्तु) मन चारं दिशाओं में (या सब दिशाओं में) भागता रहता है—यह तो स्मरण/भजन/जाप नहीं है। (यह तो स्वयं को और दूसरों को धोखा देना मात्र है)।

22. पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय॥

शब्दार्थ—ये संसारी धर्मग्रन्थों को पढ़ते-पढ़ते मर गए, किन्तु इनमें कोई भी पंडित/ज्ञानी न हो सका। जो कोई व्यक्ति इन पोथिन्यों को छोड़कर प्रेम के ढाई अक्षर पढ़ ले (मन में प्रेम को, मानवता को बसा ले) तो वही ज्ञानी हो जाए।

23. जहां प्रेम तहं नेम नहिं, तहां न बुधि व्यवहार।
प्रेम मगन मन भया, कौन गिने तिथि वार॥

शब्दार्थ—जहाँ प्रेम का वास हो जाता है, वहां नियम, विधान आदि व्यवहारिकता नहीं रह जाती, लोक मर्यादा और तकल्लुफ आदि नहीं रह जाते। प्रेम में खोया हुआ व्यक्ति तिथि-वार आदि की गणना भी नहीं करता, यानि समय की ओर भी उस का ध्यान नहीं जाता, वह बस प्रेम में ही सुध खोया रहता है।

24. साहिब के दरबार में, कमी काहु की नाहिं।
बंदा मौज न पावहीं, चूक चाकरी माहिं॥

शब्दार्थ—साहब (गुरु या ईश्वर) के दरबार में किसी भी वस्त की कमी नहीं है (वहां तो सभी के अक्षुण्ण भंडार है)। फिर भी यदि सेवक को मौज (आनन्द) की प्राप्ति नहीं हो पा रही तो अवश्य ही उसकी सेवा में कोई चूक है। कोई भूल, कमी या त्रुटि है।